1

आत्मिक रूप से वंचित

(मत्ती 5:3)

मान लो कि आपको कागज का एक टुकड़ा दिया जाता है और आपसे कहा जाता है कि आप जीवन में जो सचमुच में चाहते हैं उसे इस कागज में लिख दें। आप क्या लिखेंगे? कई चीज़ों के नाम लिखे जा सकते हैं; पर बहुतों के लिए सबसे अधिक इच्छा की जाने वाली चीज़ *प्रसन्नता* है।

संसार प्रसन्नता को पाने के लिए अति चरमों तक चला गया है। राजा सुलेमान से बढ़कर प्रसन्नता को पाने के ढंगों की तलाश कभी किसी ने नहीं की। उसने सांसारिक बुद्धि के द्वारा प्रसन्नता की तलाश की। उसका निष्कर्ष क्या था?

> ... देख, जितने यरूशलेम में मुझ से पहिले थे, उन सभों से मैं ने बहुत अधिक बुद्धि प्राप्त की है; और मुझ को बहुत बुद्धि और ज्ञान मिल गया है। ... यह भी वायु को पकड़ना है। क्योंकि बहुत बुद्धि के साथ बहुत खेद भी होता है, और जो अपना ज्ञान बढ़ाता है वह अपना दुःख भी बढ़ाता है (सभोपदेशक 1:16-18)।

सुलैमान ने शराब, शबाब और रबाब सहित मनोरंजन के हर कल्पना किए जाने वाले ढंग का प्रयोग किया (सभोपदेशक 2:1, 8)। वह इतना धनवान हो गया कि उसके समय में ''चांदी का कोई मोल नहीं माना जाता था'' (1 राजाओं 10:21)। वह बैल, भेड़ बकरी, हिरण, चिकारे, यखमूल और चरनी वाले पक्षी खाने के लिए बैठता था (1 राजाओं 4:22, 23)। वह ऐसी किसी भी चीज़ से इनकार नहीं करता था जो उसे लगता था कि यह आनन्द देने वाली है (सभोपदेशक 2:10)। उसने इस सब से क्या सीखा: ''सब कुछ व्यर्थ और वायु को पकड़ना है'' (आयत 11क)। गलत रास्ते पर चलने वालों को प्रसन्नता नहीं मिल सकती। कीमत चुकाने को तैयार न रहने वालों के लिए यह दूर की कौड़ी ही रहेगी।

हम मत्ती 5:3-12 का अध्ययन आरम्भ करने वाले हैं इस वचन में[1] हमें सच्ची प्रसन्नता का परमेश्वर का रहस्य मिलता है-जिसे ह्युगो मेकोर्ड ने ''प्रसन्नता की गारंटी'' कहा है।[2] इन आयतों को ''धन्य वचन'' के रूप में जाना जाता है। धन्य वचन के लिए अंग्रेज़ी शब्द *beatitude* लातीनी भाषा के शब्द *beatus* से लिया गया है जिसका अर्थ ''धन्य'' या ''प्रसन्न'' है।[3] अधिक सामान्य अनुवादों में हर आयतों का आरम्भ ''धन्य'' शब्द के साथ होता है।

''धन्य'' यूनानी शब्द makarios का अनवुाद है जिसका मूल अर्थ ''धन्य, प्रसन्न'' है।[4] ''धन्य'' के बजाय इस शब्द का इस्तेमाल ''प्रसन्न'' करना इसका गलत अनुवाद नहीं होगा, जैसा कि फिलिप्स के अनुवाद में किया गया है:

> कितने प्रसन्न हैं, जो दीन मन के हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।

कितने प्रसन्न हैं वे, जो शोक का अर्थ जानते हैं, क्योंकि उन्हें तसल्ली और शान्ति दी जाएगी!

कितने प्रसन्न हैं वे, जो कुछ दावा नहीं करते क्योंकि समस्त पृथ्वी उन्हीं की होगी।

कितने प्रसन्न हैं वे, जो भलाई के भूखे और प्यासे हैं, क्योंकि उन्हें पूरी तरह से तृप्त किया जाएगा!

प्रसन्न हैं वे, जो दयावान हैं, क्योंकि उन पर दया की जाएगी।

कितने प्रसन्न हैं वे, जो बिल्कुल गम्भीर हैं, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे।

कितने प्रसन्न हैं वे, जो मेल कराते हैं, क्योंकि वे परमेश्वर के पुत्र कहलाएंगे।

कितने प्रसन्न हैं वे, जिन्होंने भलाई के कार्य के लिए सताव झेला है, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है!

परन्तु हमें सावधान रहना होगा कि ''प्रसन्न'' और ''प्रसन्नता'' शब्दों की परिभाषा वैसे न दें जैसे संसार देता है। अंग्रेज़ी में इसके लिए ''happy'' और ''happiness'' पुराने अंग्रेज़ी शब्द ''hap'' से लिए गए हैं जिसका अर्थ कोई घटना होता है।[5] इस प्रकार की ''प्रसन्नता'' उसी घटना से प्रभावित होती है, जिसमें कोई अपने आपको पाता है। नये नियम में *makarios* का अर्थ आम तौर पर ''वह विलक्षण आनन्द होता है जो ईश्वरीय राज्य में भागीदार होने से मिलता है।''[6] AB में आयत 3 के पहले भाग को इस प्रकार विस्तार दिया गया है: ''धन्य (अपनी बाहरी स्थितियों के बावजूद परमेश्वर के समर्थन और उद्धार में जीवन के आनन्द और सन्तुष्टि से प्रसन्न, ईर्ष्यालु और आत्मिक रूप में समृद्ध होना) हैं वे जो मन के दीन हैं।'' *Makarios* वह शब्द है जिसका वर्णन सच्ची खुशी, गहरी खुशी, बनी रहने वाली खुशी के वर्णन के लिए किया जाता है। मैं दोहराता हूं कि यह बाहरी परिस्थितियों से प्रभावित नहीं होता। बल्कि यह भीतर से निकलती है। मुझे इसे ''अतिरिक्त खुशी'' कहना पसन्द है।

क्या आप खुशी चाहते हैं? तो फिर ''अतिरिक्त खुशी'' पाने के लिए यीशु द्वारा दी गई आठ शर्तों[7] का अध्ययन करने में हमारे साथ रहें। यह पाठ उन शर्तों में से पहली पर है।

''धन्य हैं वे जो मन के दीन हैं ...।''

हम में से अधिक लोग पहाड़ी उपदेश से इतना परिचित हैं कि हम उस प्रभाव से अज्ञात हैं जो इसे पहली बार सुनने वालों पर पड़ा था। यीशु के नियम इतने क्रांतिकारी थे कि उसकी हर बात के बाद उसे आगे बढ़ने के लिए भीड़ को शांत करने तक रुकना पड़ा होगा। मसीह की लगभग हर शिक्षा सांसारिक बुद्धि और यहूदी सोच के विपरीत थी। पहला धन्य वचन इसका एक उदाहरण है: ''धन्य [प्रसन्न] हैं, वे जो मन के दीन हैं क्योंकि पवित्र राज्य उन्हीं का है।'' सांसारिक बुद्धि के सम्बन्ध में यह ''आगे बढ़ने'' और ''कुछ बनने'' के लिए आवश्यक मानी जाने वाली बातों से उलट था। यहूदी सोच के सम्बन्ध में यह परम्परा के विरुद्ध था। यहूदी घमण्डी लोगो को गर्व था कि वे घमण्डी हैं। उन सब लोगों के लिए और हम से यीशु ने कहा कि ''धन्य हैं वे जो मन के दीन हैं।''

''मन के दीन'' होने का अर्थ क्या *नहीं* है।

''मन के दीन'' कहने से यीशु का क्या अभिप्राय है हमें पहले ध्यान देना चाहिए कि यीशु ने यह *नहीं* कहा, ''धन्य हैं वे जो जेब के निर्धन हैं।'' यह सही है क्योंकि जो भौतिक वस्तुओं में निर्धन हैं उनकी आत्मा में निर्धन होने की बात सम्भव है (1 कुरिन्थियों 1:26–29 और 1 तीमुथियुस 6:9 पर विचार करें), पर निर्धन होने के बावजूद घमण्डी, शेखी वाले मन होना सम्भव है। जो ऐसे लोग हैं जिन्हें आर्थिक रूप में आशीष मिली है और वे दीन हैं और परमेश्वर पर ऐसे निर्भर हैं जैसे हो सकता है।[8] धन हर बात का जवाब नहीं है। परमेश्वर समृद्ध को यूं ही दोषी नहीं ठहरा देता और निर्धनता को यूं ही आशीष नहीं दे देता।

हम यह भी जोड़ सकते हैं कि यीशु ने *यह नहीं* कहा, ''धन्य हैं वे जो निर्धन सोच वाले हैं।''[9] कइयों को लगता है कि वे मन के निर्धन इसलिए हैं क्योंकि वे अपने आप से प्रेम नहीं करते; वास्तव में वे अपने आपको तुच्छ मानते हैं। राजा की संतान के लिए यह सही व्यवहार नहीं है। बाइबल बताती है कि हर प्राण परमेश्वर की दृष्टि में मूल्यवान है (देखें मत्ती 16:26)।

''मन के दीन'' होने का *क्या* अर्थ है

तो फिर ''मन के दीन'' वाक्यांश का क्या अर्थ है? ''दीन'' के लिए यीशु द्वारा इस्तेमाल किया गया शब्द *ptochos* है। *Ptochos* का अर्थ केवल निर्धन नहीं बल्कि इसका सम्बन्ध वंचित अर्थात दरिद्र होने से है। यह शब्द उस शब्द से लिया गया था जिसका अर्थ भय के कारण ''झुकना या छुपना'' है।[10] इसका अर्थ पूरी दरिद्रता है जो लोगों को भीख मंगवाने तक ले आती है।''[11] भिखारी लाज़र के विवरण के लिए इसी शब्द का इस्तेमाल किया गया है: ''लाज़र नाम का एक कंगाल घावों से भरा हुआ उस [धनवान मनुष्य] की डयोडी पर छोड़ दिया जाता था और वह चाहता था कि धनवान की मेज़ पर जूठन से अपना पेट भरे'' (लूका 16:20, 21क)। अमेरिका में लोगों के तीन वर्ग पाए जाते हैं: धनवान, निर्धन, और बड़ा ''मध्य वर्ग'' जिसमें हम में से अधिकतर अपने आपको पाते हैं। बाइबल के समय में लोगों के दो मुख्य वर्ग पाए जाते थे: धनवान और निर्धन, यानी वे जिनके ''पास होता है'' और वे ''जिनके पास नहीं'' होता।[12]

हमारे वचन पाठ *ptochos* का इस्तेमाल उनके लिए नहीं हुआ है जिने पास थोड़ा है बल्कि यह उनके लिए है जिनके पास कुछ नहीं है। यह सड़क किनारे पड़े भिखारी की तस्वीर को दिखाता है यानी उस भिखारी को, जो पूरी तरह से दूसरों के रहम पर है, ऐसा भिखारी जिसे मालूम है कि उसके पास कुछ नहीं है और यदि उस पर कोई तरस न करे तो वह मर जाएगा! आपको और मुझे यदि हम स्वर्ग के राज्य को देखना चाहते हैं तो आत्मिक भिखारी बनना आवश्यक है। हमें मानना होगा कि हम आत्मिक रूप में वंचित थे। एक अर्थ में यीशु ने कहा, ''धन्य हैं वे जो अपनी नैतिक और धार्मिक योग्यताओं के अपने स्वमूल्यांकन में, अपनी आत्मिक कमी को जानते हुए भिखारी हैं।'' गुडस्पीड के अनुवाद में है, ''धन्य हैं वे जो अपनी आत्मिक आवश्यकता को महसूस करते हैं। ...''

परमेश्वर ने हमेशा उन लोगों को चाहा और सराहा है जो अपनी आत्मिक आवश्यकता को समझते हैं। दाऊद ने लिखा है, ''टूटा मन परमेश्वर के योग्य बलिदान है; हे परमेश्वर, तू टूटे और पिसे हुए मन को तुच्छ नहीं जानता'' (भजन संहिता 51:17)। इस आयत को पढ़ते हुए हमारे

मन में आ सकता है, ''पर परमेश्वर ने पुराने नियम में पशुओं के बलिदान की आज्ञा दी थी।'' सुलेमान के मन्दिर के समर्पण के समय अन्य पशुओं के अलावा 1,20,000 भेड़ें और 22,000 बैल बलिदान किए गए थे, ''... जिनकी गिनती किसी रीति से नहीं हो सकती थी'' (1 राजाओं 8:5; देखें आयत 63)। परमेश्वर ने मन्दिर को भरने के लिए महिमा का बादल भेजकर जवाब दिया था (आयत 10) तो फिर दाऊद ने क्यों कहा कि ''टूटा मन परमेश्वर के योग्य बलिदान है''? क्योंकि प्रभु पशुओं का बलिदान तभी स्वीकार करेगा यदि वे टूटे और खेदित मन वाले आराधकों द्वारा भेंट किए जाते थे।

यशायाह ने वैसा मन दिखाया जैसा परमेश्वर चाहता है। उस सर्वोच्च और पवित्र को देखने पर उसने उसे देखकर अपने आपको तुच्छ माना, उसने कहा, ''हाय! हाय! मैं नाश हुआ; क्योंकि मैं अशुद्ध होंठ वाला मनुष्य हूं, और अशुद्ध होंठ वाले मनुष्यों के बीच में रहता हूं ...'' (यशायाह 6:5)। बाद में उसने कहा कि ''हमारे धर्म के काम सब के सब मैले चिथड़ों के समान हैं'' (64:6)। जब मैं विचार करता हूं कि मैं अपने बेदाग प्रभु को क्या भेंट करूं, तो यशायाह की तरह मुझे भी कहना पड़ता है, ''मुझ पर हाय!''

''मन के दीन'' होने के अर्थ का एक अच्छा उदाहरण फरीसी और चुंगी लेने वाले के दृष्टांत में मिलता है (लूका 18:9-14)। एक ओर तो फरीसी अपने आप में धर्मी था। उसे अपने आप में कोई आत्मिक कमी नहीं लगी और उसे ईश्वरीय सहायता की आवश्यकता महसूस नहीं हुई। दूसरी ओर चुंगी लेने वाला मन का दीन था। उसने इस बात को माना कि वह एक पापी है, जिसे परमेश्वर के अनुग्रह की अत्यधिक आवश्यकता है। उसने प्रार्थना की ''हे परमेश्वर मुझ पापी पर दया कर'' (आयत 13)। यीशु ने निष्कर्ष निकाला, ''मैं तुम से कहता हूं, कि वह दूसरा नहीं; परन्तु यही मनुष्य धर्मी ठहराया जाकर अपने घर गया'' (आयत 14क)। ऐसा कोई संकेत नहीं है कि अपनी खूबियों को गिनाकर फरीसी ने गलत किया था, पर उसके घमण्डपूर्ण व्यवहार ने ही उसे दोषी ठहरा दिया। कोई व्यक्ति नैतिकता में शुद्ध, कारोबार में ईमानदार, और देने में दानी हो सकता है पर फिर भी उसके बावजूद यदि वह मन का दीन नहीं है तो परमेश्वर द्वारा उसे अस्वीकार किया जाएगा।

''... क्योंकि स्वर्ग का राज्य ऐसों ही का है।''

यह ध्यान दिलाने के बाद कि ''मन के दीन'' होने का क्या अर्थ है, हम पूछते हैं, ''सच्ची और सदा रहने वाली खुशी से ऐसा दीन होने का क्या सम्बन्ध है?'' केवल मन का दीन व्यवहार होना व्यक्ति को प्रसन्नता या खुशी पाने में सहायता कर सकता है। बहुत से लोग दुखी हैं क्योंकि वे अपनी ही उम्मीदों पर खरा नहीं उतरते। मन के दीन व्यक्ति ने अपने आपको ईमानदारी से देखा है और इस कारण उसने अपने ऊपर भरोसा रखने के बजाय प्रभु में भरोसा कर लिया है। और प्रभु उसे शर्मिंदा नहीं होने देगा। परन्तु हमारे वचन पाठ के अनुसार, दीन मन वाले व्यक्ति के प्रसन्न हो सकने का मुख्य कारण यह है कि उन्हें एक विशेष प्रतिज्ञा दी गई है कि ''स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।'' यह प्रतिज्ञा उनके साथ रहती है, जीवन में उनके साथ कुछ भी हो जाए।

''स्वर्ग का राज्य'' क्या है?

यह हमें इस प्रश्न पर ले आता है कि '' 'स्वर्ग का राज्य' क्या है और 'मन के दीन' होना हमें इसे पाने में कैसे सहायता करता है?'' आइए प्रश्न के पहले भाग से आरम्भ करते हैं: ''स्वर्ग का राज्य'' क्या है?

धन्य वचनों की कुछ प्रतिज्ञाएं इस जीवन पर प्रतीत होती हैं, जबकि अन्य मुख्यतया आने वाले जीवन के लिए लगती हैं। मैंने निष्कर्ष निकाला है सभी प्रतिज्ञाएं *आशिंक* रूप में यहां पूरी होती हैं और *पूर्ण रूप में* इसके बाद भी पूरी होती हैं। यह आम तौर पर पाई जाने वाली प्रसन्नता से मेल नहीं खाती। परमेश्वर की संतान मूल प्रसन्नता को अब जान सकती है, पर इस जीवन में प्रसन्नता पाप से भ्रष्ट संसार में रहने के दुखों के साथ मिली-जुली रहेगी। पूर्ण प्रसन्नता यानी बिना मिलावट और हेर-फेर की आने वाले संसार में ही मिलेगी। मैं मानता हूं कि यह पूरा होना यहां और इसके बाद ''[परमेश्वर] का राज्य उन्हीं का है'' की प्रतिज्ञा से जुड़ा है।

अनुवादित शब्द ''राज्य'' (*basileia*) ''सम्प्रभुता, राजसी सामर्थ, शक्ति'' का प्रतीक है। अलंकार के रूप में यह इलाका या लोग है जिस पर कोई राजा शासन करता है।''[13] परमेश्वर के राज्य का अर्थ परमेश्वर का शासन है। नये नियम में हम राज्य में दो मुख्य उपयोग देखते हैं। पहला तो लोगों का वह समूह है जिन पर परमेश्वर और मसीह शासन करते हैं; ये लोग कलीसिया कहलाते हैं। मत्ती 16:18, 19 में यीशु ने ''राज्य'' और ''कलीसिया'' शब्दों का इस्तेमाल अदल बदलकर किया। जब हम पिछले पापों से बचाए जाते हैं तो परमेश्वर हमें अपनी कलीसिया में मिला लेता है (प्रेरितों 2:47; KJV)[14] जो यह कहने का दूसरा ढंग है कि परमेश्वर हमें ''अपने प्रिय पुत्र के राज्य'' में पहुंचा देता है (कुलुस्सियों 1:13)। वहां पर जैसा कि फ्रैड्रिक नियेश ने कहा है, हमारा लक्ष्य ''वह बनो जो तुम हो।''[15] चाहे हम परमेश्वर के राज्य की नागरिकता का आनन्द पहले से ले रहे हैं पर हमें प्रभु को अपने मनों में राज करने की ओर से और अनुमति देनी होगी।

नये नियम में ''राज्य'' शब्द का दूसरा मुख्य उपयोग वह स्वर्गीय क्षेत्र है जिस पर परमेश्वर और मसीह राज करते हैं (देखें 2 तीमुथियुस 4:18)- यानी वह इलाका जिसे हम आम तौर पर केवल ''स्वर्ग'' कहते हैं।[16] मेरा मानना है कि हमारा वचन पाठ सिखाता है कि कलीसिया का सदस्य होने के योग्य केवल वही लोग हैं जो ''मन के दीन'' हैं और केवल उन्हीं को स्वर्ग की आशा मिल सकती है जो ''मन के दीन'' हैं। परमेश्वर की कलीसिया लोगों को दी जाने वाली प्रतिज्ञा और स्वर्ग में मिलने वाली आशिषों का पूर्वाभास निश्चित रूप से किसी को प्रसन्नता देने के लिए काफ़ी होना चाहिए।

''मन के दीन'' होना हमें स्वर्ग के राज्य को पाने में कैसे सहायता करता है?

अब हम अपने प्रश्न के दूसरे भाग में आते हैं कि '' 'मन के दीन' होना हमें स्वर्ग के राज्य को पाने में कैसे सहायता करता है?''''राज्य'' शब्द के मूल अर्थ को याद रखें कि इसका सम्बन्ध परमेश्वर के शासन से है। कोई मनुष्य परमेश्वर को अपने मन के सिंहासन पर बिठाने को तैयार नहीं है जब तक वह उसमें से अपने आपको न उतारे।

फिर नये नियम में ''राज्य'' शब्द के दो मुख्य उपयोगों को याद रखें कि यह कलीसिया और

स्वर्ग की बात करता है। *पहले देखें कि मन के दीन होना कलीसिया के लोग बनने के लिए कैसे आवश्यक है।* कलीसिया मसीह के लहू के द्वारा उद्धार पाए हुए लोगों का समूह है (देखें इफिसियों 5:23, 25)। मसीही लोगों को लहू के द्वारा उद्धार पाने के लिए आवश्यक ''पांव उंगलियों का अभ्यास'' सिखाया जाता है यानी यह कि हमारे लिए सुनना, विश्वास करना, मन फिराना, अंगीकार करना और बपतिस्मा लेना आवश्यक है।[17]

जब तक कोई अपने आपको आत्मिक रूप से वंचित नहीं समझता, तब तक वह सुसमाचार *सुनने* के लिए तैयार नहीं है (देखें रोमियों 10:17)। जब तक किसी को लगता है कि वह आत्मिक रूप में अच्छी स्थिति में है तब तक उसके मन में उद्धार की कोई इच्छा नहीं होती। फिर जब तक कोई अपनी ही भलाई पर भरोसा रखता है, तब तक यीशु में *विश्वास* करके उसमें अपने भरोसे का *अंगीकार* नहीं कर सकता (देखें यूहन्ना 3:16; रोमियों 10:9, 10)। क्या *मन फिरा* सकता है? जिसे लगता है कि वह सर्व-पर्याप्त है वह मन फिराने जैसी बात की आवश्यकता पर सोचेगा भी नहीं।

इसके अलावा जब तक कोई उद्धार पाने के लिए परमेश्वर के अनुग्रह पर अपनी पूर्ण निर्भरता को नहीं मानता, तब तक वह *बपतिस्मा लेने* के लिए तैयार नहीं (प्रेरितों 2:38, 41, 47)। दूसरे लोग बपतिस्मा लेते हैं या दूसरे लोग चाहते हैं कि वे बपतिस्मा ले, ऐसे व्यक्ति ने वचन के अनुसार बपतिस्मा नहीं लिया है। कई बार किसी भले व्यक्ति के लिए कहा जाता है, ''उसे तो केवल बपतिस्मा लेना आवश्यक है।'' नहीं, उसे तो अपनी भलाई के बावजूद, गहरे अर्थ में यह समझने की आवश्यकता है कि वह आत्मिक रूप में कुछ नहीं है और उसके पास परमेश्वर को देने के लिए कुछ नहीं है। तभी और केवल तब वह विनम्र आज्ञापालन में प्रभु के पास आने को तैयार होता है।

अन्त में नये नियम में ''राज्य'' के दूसरे मुख्य अर्थ यानी स्वर्ग पर विचार करते हैं। यीशु ने कहा, ''प्राण देने तक विश्वासी रह; तो मैं तुझे जीवन का मुकुट दूंगा'' (प्रकाशितवाक्य 2:10ग)। जब तक कोई मन का दीन नहीं होता तब तक वह वफ़ादार मसीही जीवन जीने को तैयार नहीं है। यीशु ने लौदीकिया की कलीसिया का उपचार करते हुए उन्हें बताया था, ''तू जो कहता है, कि मैं धनी हूं, और धनवान हो गया हूं, और मुझे किसी वस्तु की घटी नहीं, और यह नहीं जानता, कि तू अभागा और तुच्छ और कंगाल और अन्धा, और नङ्गा है'' (प्रकाशितवाक्य 3:17)। उन्हें लगता था कि उन्हें किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं है जबकि वास्तविकता में उन्हें हर चीज़ की आवश्यकता है।

सारांश

''धन्य हैं वे जो मन के दीन हैं क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।'' ''धन्य'' होने का अर्थ परमेश्वर की आशिषों को पाना है और बदले में सचमुच और अन्दर से प्रसन्न होना, बाहरी परिस्थितियां चाहे जैसी भी हों। ''मन के दीन'' होने का अर्थ यह मानना है कि कोई आत्मिक रूप से वंचित, यानी आत्मिक भिखारी है जो पूर्णतया परमेश्वर के अनुग्रह और करुणा पर निर्भर है। ''स्वर्ग का राज्य'' परमेश्वर के शासन को कहा गया है चाहे वह कलीसिया में हो या स्वर्ग में। एकमात्र निष्कर्ष जो हम निकाल सकते हैं वह क्या है? यदि हमें प्रसन्न होना और अब

और अनन्तकाल के लिए परमेश्वर की आशिषों का आनन्द लेना है तो हमें ''मन के दीन'' होना पड़ेगा। हमारा व्यवहार ''युगों की चट्टान'' नामक भजन में व्यक्त होना आवश्यक है:

खाली हाथ मैं आता हूं:
क्रूस तले मैं जाता हूं;
नंगे को पहिना लिबास,
लाचार पर कर, फ़ज़ल ख़ास;
चश्मे पास मैं दौड़ता हूं:
धोता है सिर्फ तेरा लहू।[18]

जो प्रश्न हम में से हर किसी को पूछना चाहिए वह यह है कि ''*क्या* मैं मन का दीन हूं?'' मन का दीन होने का विपरीत शब्द ''मन का धनी'' होना यानी (जैसा कि हम कहते हैं) अपने आप से भरे होना यानी अपने आप को पर्याप्त समझना और अपने आप में संतुष्ट होना। लूका 6 में यीशु ने सकारात्मक और नकारात्मक दोनों बातों को शामिल करते हुए इस धन्य वचन पर और संस्करण दिया: ''धन्य हो तुम, जो दीन हो, क्योंकि परमेश्वर का राज्य तुम्हारा है। परन्तु हाय तुम पर; जो धनवान हो, क्योंकि तुम अपनी शान्ति पा चुके'' (आयतें 20, 24)। यीशु इस तथ्य की कोई बात कर रहा हो सकता है कि उसे आर्थिक रूप से निर्धन लोगों द्वारा जल्दी स्वीकार किया गया (देखें मरकुस 12:37; KJV), पर उसके शब्दों की इससे व्यापक प्रासंगिकता मत्ती वाले धन्य वचन से मेल खाती है। कुछ लोग अपने ही अनुमान में आत्मिक रूप में ''निर्धन'' हैं जबकि बहुत से लोग ''धनवान'' हैं। आत्मा में धनवान लोगों ने इस जीवन की ''अपनी शांति'' पहले ही पा ली है और अनन्तकाल में उन्हें और पाने की राह देखने की आवश्यकता नहीं है। कितने दुख की बात है!

हम में से कुछ लोगों को यह मानना अच्छा नहीं लगता कि हम अपने आप में सब कुछ नहीं कर सकते, यानी यह कि हमें सहायता की आवश्यकता है। मेरे मन में लड़कपन की वे विनाशकारी घटनाएं आती हैं, वे गड़बड़ियां जो इस कारण हुईं कि मैं यह मानने को तैयार नहीं था कि मुझे नहीं मालूम कि जो मुझे करने के लिए कहा गया था वह मुझे करना नहीं आता, और मैंने सहायता नहीं मांगी। मेरी प्रार्थना है कि आप केवल इस कारण न खो जाएं कि आप इतने घमण्डी हैं कि यह न मानें कि आप बिना परमेश्वर की सहायता के, यानी बिना उसके अनुग्रह और करुणा के उद्धार नहीं पा सकते। अपनी आत्मिक कमजोरी को मान लें और दीन होकर अपने प्रभु के पास आ जाएं। यदि आपको परमेश्वर के प्रेम की आवश्यकता है, तो मैं आप से आज ही उसके पास आने का आग्रह करता हूं।

टिप्पणियां

[1]उपदेश से थोड़ा पहले मैंने एक आदमी से मत्ती 5:1-12 ऊंचा पढ़वाया था। यहां पर मैंने कहा ''अभी अभी जो वचन हमने पढ़ा था। ...'' [2]ह्यूगो मेकोर्ड, *हैप्पीनेस गारंटिड* (मरफ्रीस्बोरो, टेनिसी: डिहॉफ पब्लिकेशंस, 1956). [3]केन पामर, ''बीटीच्यूड्स'' (http://www.lifeofchrist.com/teachings/sermons/mount/beatitudes.asp; इंटरनेट; 10 अप्रैल 2008 को देखा गया); जेम्स एम. टोले, *दि बीटीच्यूड्स* (फुलर्टन, कैलिफोर्निया: टोले

पब्लिकेशंस, 1966), 6. [4]सी. जी. विलके एंड विलिबल्ड ग्रिम, *ए ग्रीक-इंग्लिश लैक्सिकन आफ़ दि न्यू टैस्टामेंट,* अनु. और संशो. जोसेफ एच. थेयर (एडिनबर्ग: टी. एंड टी. क्लार्क, 1901; रिप्रिंट, ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुकस, 1977), 386. [5]*दि अमेरिकन हैरिटेज डिक्शनरी,* चौथा संस्क. (2001), एस. वी. ''हैप्पी।'' [6]ज्योफ्री डब्ल्यू. ब्रोमिले, *थियोलॉजिकल डिक्शनरी ऑफ़ न्यू टैस्टामेंट,* संपा. गरहर्ड किट्टल एंड गरहर्ड फ्रैडरिक; अनु. ज्योफ्री डब्ल्यू. ब्रोमिले, abr. (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1985), 548. [7]कइयों का मानना है कि सात शर्तें हैं (धन्य वचन) जबकि अन्य इसे नौ गिनते हैं। [8]बाइबल का उदाहरण अब्राहम है। [9]''मन का दीन'' होने और ''निर्धन मन'' होने में अन्तर करना आसान नहीं है। आगे दिए गए कुछ उद्धरण यह संकेत देते हैं कि परमेश्वर की प्रेरणा पाए लेखक अपने आप को शून्य मानते थे। हमें यह समझना आवश्यक है कि *पवित्र परमेश्वर की तुलना में* हम व्यर्थ हैं: प्रेमी परमेश्वर की नज़रों में हमारा बड़ा मूल्य है। [10]डब्ल्यू. ई. वाइन, मैरिल एफ. अंगर एंड विलियम व्हाइट, जूनि., *वाइन'स कम्पलीट एक्सपोज़िटरी डिक्शनरी ऑफ़ ओल्ड एंड न्यू टैस्टामेंट वर्ड्स* (नैशविल्ले: थॉमस नेल्सन पब्लिशर्स, 1985), 56.

[11]ब्रोमिले, 969. [12]संसार के कई भागों में आज भी ऐसा होता है। [13]वाइन, 344. [14]KJV में प्रेरितों 2:47 में ''चर्च'' शब्द का इस्तेमाल किया गया है। अन्य संस्करणों में ऐसा नहीं है, पर संदर्भ से संकेत मिलता है लूका के मन में कलीसिया यानी चर्च ही था। [15]जर्मन दार्शनिक फ्रैडरिक नेशे द्वारा प्रसिद्ध किया गया यह वाक्यांश संभवत: सबसे पहले यूनानी कवि पिंडार द्वारा इस्तेमाल किया गया (टोनी हेल, ''बिकम हू यू आर: दि फ्रीडम टू क्रिएट'' [http://www.anonymityone.com/Faq97.htm]; इंटरनेट; 24 April 2008 को देखा गया)। [16]सुझाव दिया गया है कि ''*परमेश्वर* का राज्य'' कलीसिया को कहा गया है जबकि ''*स्वर्ग* का राज्य'' यहां स्वर्ग के लिए है, परन्तु नये नियम में दोनों शब्दों का इस्तेमाल अदल-बदल कर किया गया है (उदाहरण के लिए देखें मत्ती 19:23, 24)। *संदर्भ* ही तय करता है कि लेखक के मन में ''सांसारिक'' राज्य था या ''स्वर्गीय'' राज्य। [17]मैं बच्चों के साथ एक आसान सा उंगली का अभ्यास इस्तेमाल करता हूं। मैं अंगूठे के साथ वाली उंगलियों को क्रूस की तरह रखता हूं और कहता कि ''यीशु हमारे लिए क्रूस पर मरा।'' फिर मैं यह कहते हुए कि ''अब हमें सुनना, विश्वास करना, मन फिराना, अंगीकार करना और बपतिस्मा लेना आवश्यक है।'' एक ही बार में एक हाथ की उंगलियों को गिनता हूं। मैं यह कहते हुए कि ''और फिर बढ़ें'' अपने हाथों को इकट्ठे करता और उन्हें अलग करता हूं। मैं बच्चों को मेरे साथ यही करने के लिए कहते हुए कई बार ऐसा करने को कहता हूं। [18]ए. एम. टॉपलेडी, ''युगों की चट्टान,'' *सौंग्स ऑफ़ फेथ एंड प्रेज़,* संक. एवं संपा. आल्टन व हॉवर्ड (वेस्ट मोनरो, लुइसियाना: हॉवर्ड पब्लिशिंग कं., 1994).

मत्ती 5:3-12 में सात, आठ या नौ धन्य वचन?

कइयों को धन्य वचनों की गिनती *सात* रखना अच्छा लगेगा, क्योंकि ''सात'' बाइबल का महत्वपूर्ण अंक है। ऐसा करने का एक ढंग यह कहना है कि आयत 10 वास्तव में आयत 3 का विस्तार है क्योंकि दोनों का अन्त एक ही प्रतिज्ञा के साथ होता है। अन्य यह ध्यान दिलाते हैं कि हमारे वचन पाठ ''धन्य'' शब्द *नौ* बार आता है। उनका सुझाव है कि 11 और 12 आयतें आयत 10 से अलग धन्य वचन है और इस कारण नौ धन्य वचन माने जाएं। परन्तु अधिकतर लेखक *आठ* धन्य वचनों की आम सूची पर रुक जाते हैं और हम अपने अध्ययन में ऐसा ही करेंगे। बेशक धन्य वचनों कि गिनती नहीं बल्कि उसकी सामग्री का महत्व है।